महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

मानविकी एवं भाषासंकाय

संस्कृतविभाग

एम. ए. द्वितीय सत्र

विषय – उत्तररामचरित

Code – SNKT2002

द्वितीय अङ्क- I

विश्वजित् वर्मन

सहायक-आचार्य, संस्कृत विभाग

biswajitbarman@mgcub.ac.in

यथेच्छाभोग्यं वो वनभिवमयं मे सुदिवसः
सतां सद्भिःसङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति।
तरच्छाया तोयं यदपि तपसां योग्यमशनं
फलं वा मूलं वा तदपि न पराधीनमिह वः ॥ २.१ ॥

❑ अन्वय

इदं वनं वः यथेच्छाभोग्यम्, अयं मे सुदिवसः, हि सतां सद्भिः सङ्गः कथमपि पुण्येन भवति। तरुच्छाया, तोयं यदपि तपसा योग्यम् अशनं फलं वा मूलं वा, तदपि इह वः न पराधीनम् ॥

❑शब्दार्थ

इदम्- यह, वनम्- अरण्य, वः- आपके, यथेच्छाभोग्यम्- इच्छानुसार उपभोग करने योग्य, अयम्- यह, मे- मेरा, सुदिवसः- शुभदिन, हि- क्योंकि, सताम्- सज्जनों का, सद्भिः- सज्जनों से, सङ्गः- साथ, कथमपि- किसी प्रकार से, पुण्येन- सुकृत से, भवति- होता है, तरुछाया- वृक्षों की छाया, तोयम्- जल, यदपि- यद्यपि, तपसाम्- तपस्या के, योग्यम्- अनुकूल, अशनम्- भोजन, फलम्- फल, मूलम्- कन्दादि, तदपि- फिर भी, इह- यहाँ, वः- आपके लिए, पराधीनम्- परवश, न- नहीं है।

❑अर्थ

यह वन आपके इच्छानुसार उपभोग के योग्य है। आज मेरा शुभदिन है, क्योंकि सज्जनों का सज्जनों के साथ सम्पर्क किसी पुण्य से होता है। वृक्षों की छाया जल और जो भी तपस्या के अनुकूल भोजन, फल, फुल तथा कन्दादि (वह सब) यहाँ आपके लिए पराधीन नहीं है।

❑अलङ्कार

इस पद्य में अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है। अर्थान्तरन्यास अलङ्कार का लक्षण है-

सामान्यं वा विशेषं वा तदन्येन समर्थ्यते।
यत्तु सोऽर्थान्तरन्यसः साधर्म्येणेतरेण वा॥

अर्थात् जहाँ सामान्य कथन का विशेष से अथवा विशेष कथन का सामान्य से समर्थन किया जाए, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है। यहाँ पर सज्जनों का सज्जनों से समागम इस वाक्य में सामान्य से विशेष का समर्थन करने के कारण अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार हुआ है।

❑समास

यथेच्छभोग्यम्- इच्छामनतिक्रम्य- यथेच्छम्, समान्तात् भोग्यम्- आभोग्यम्, यथेच्छम् आभोग्यम्- यथेच्छभोग्यम्।

तरुच्छाया- तरुणां छाया

पराधीनम्- परेषाम् अधीनम्।

भोग्यम्- भोक्तुं योग्यम्।

❑छन्द-

इस पद्य में शिखरिणी छन्द है। इसका लक्षण-

रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।

इस छन्द में पहला यति षष्ठ अक्षर में तथा द्वितीय यति परवर्ती एकादश अक्षर अर्थात् पादान्त में होता है।

प्रियाप्राया वृत्तिर्विनयमधुरो वाचि नियमः
प्रकृत्या कल्याणी मतिरनवगीतः परिचयः।
पुरो वा पश्चाद्वा तदिदमविपर्यासितरसं
रहस्यं साधुनामनुपधि विशुद्धं विजयते॥२.२॥

- अन्वय-

प्रिय प्राया वृत्तिः, विनयमधुरः, वाचि नियमः प्रकृत्या कल्याणी मतिः, अनयगीतः परिचयः, इदं तत् पुरो वा पश्चाद्वा अविपर्यासितरसम् अनुपधि विशुद्धं लादुनां रहस्यं विजयते।

- शब्दार्थ-

प्रियप्रायावृत्ति- अतिशयप्रीतिकर, विनमधुरः- मधुर विनय जिस का, वाचि नियमः- वचन में सत्यता, प्रकृत्या- अपने स्वभाव से, कल्याणी मतिः- प्रियतमा बुद्धिः, अनवगीतः परिचयः-अनिन्दित परिचय, इदं तत्- उक्त वचनसारे, अविपर्यासितरसम्- अन्युनस्वभाव को, अनुपधि- बिना व्यज, विशुद्धम्- निर्दोष, साधुनां- सज्जनों का, रहस्यम्- चरित, विजयते- सर्वोत्कृष्ट से।

❑ अर्थ-

सज्जनों का अतिशय प्रीतिकर व्यवहार, विनय से मधुर वाक्-संयम, स्वभावतः विनमम्रता के साथ मधुर होता है। पहले अथवा वाद में अपरिवर्तित अनुराग वाला, कपट रहित एवं विशुद्ध चरित्र वाला सज्जन सर्वोत्कृष्ट होता है।

❑ समास-

प्रियप्राया- प्रायेण बाहुल्येण प्रियाः (सुप्सुपेति समास)

❑ अलङ्कारः-

अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार का लक्षण है- **अप्रस्तुतप्रशंसा या सा सैव प्रस्तुताश्रया।** अर्थात् प्रस्तुत विषय की अपेक्षा अप्रस्तुत विषय की जहाँ अधिक चर्चा होती है। इस पद्य में अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार है।

❑ छन्द-

इस पद्य में शिखरिणी छन्द है।

रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।

इस छन्द में पहला यति षष्ठ अक्षर में तथा द्वितीय यति परवर्ती एकादश अक्षर अर्थात् पादान्त में होता है।

वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जडे
न तु खलु तयोर्ज्ञानि शक्तिं करोत्यपहन्ति वा।
भवति हि पुनर्भूयान भेदः फलं प्रति तद्यथा
प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः ॥२.४॥

❑अन्वय-

गुरुः यथा प्राज्ञे तथैव जडे विद्यां वितरति, तयोः ज्ञाने शक्तिं तु न करोति न वा अपहन्ति, पुनः फलं प्रति हि भूयान् भेदो भवति, तद् यथा शुचिः मणिः बिम्बग्राहे प्रभवति न मृदादयः ।

❑शब्दार्थ-

गुरुः- प्राचार्य, यथा- जैसे, प्राज्ञे- बुद्धिमान् (शिष्य में) तथैव- उसी तरह, जडे- मन्दबुद्धि, विद्याम्- विद्या को, वितरति- प्रदान करता है, तयोः- उन दोनों, ज्ञाने- ज्ञान में, शक्तिम्- शक्ति, न करोति- नहीं करता है, वा- अथवा, न अपहन्ति- नष्ट नहीं करता, खलु- निश्चय ही, फलम् प्रति- फल के प्रति, पुनः- फिर भी, भूयान्- बहुत अधिक, भेदः- वैषम्य, भवति- होता है। तद् यथा- बह जिस प्रकार, शुचिः- स्वच्छ, मणिः- रत्न, बिम्बग्राहे- प्रतिबिम्ब के ग्रहण करने में, प्रभवति- समर्थ होता है, मृदादयः- मिट्टी आदि, न- नहीं (समर्थ होते)

❑अर्थ-

गुरु जिस प्रकार बुद्धिमान् शिष्य को विद्या प्रदान करता है, उसी प्रकार मन्दबुद्धि को भी विद्या प्रदान करता है, किन्तु उन दोनों के ज्ञान में स्थित शक्ति को न ही उत्पन्न करता है और न ही शक्ति का नाश करता है। फिर भी उन दोनों के फल (ज्ञानार्जन) के प्रति महान अन्तर हो जाता है। जैसे स्वच्छ मणि प्रतिबिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ होती है, मिट्टी आदि पदार्थ नहीं।

❑समास-

बिम्बग्राह्ये- बिम्बस्य ग्राह्ये।

मृदादयः – मृद् आदि येषां ते।

प्राज्ञः- प्रजानानति प्रज्ञः, प्रज्ञः एव प्राज्ञः।

❑छन्द-

इस पद्य में हरिणी छन्द है। इसका लक्षण- **नसमरसलागः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता।** इसमें पहला यति षष्ठ अक्षर में द्वितीय यति दशम अक्षर में अन्तिम यति सप्तदश अक्षर में है।

❖ अलङ्कार

❑ उपमा- साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः। अर्थात् एक वाक्य में ही उपमान और उपमेय में वैधर्म्यरहित साम्य हो तो उसे उपमा अलङ्कार कहते हैं। प्रस्तुत पद्य में बुद्धिमान एवं मणि और मन्दबुद्धि एवं मृद का उपमान-उपमेयरूप सादृश्य होने के कारण उपमा अलङ्कार है।

❑ दृष्टान्त- दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्।

जहाँ दो सामान्य या दोनों विशेष वाक्य में बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव होता है, उस स्थान पर दृष्टान्त अलङ्कार होता है। इस पद्य में विद्याग्रहण एवं बिम्बग्रहण के बीज बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव होने के कारण दृष्टान्त अलङ्कार है।

❑ अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार का लक्षण है-

अप्रस्तुतप्रशंसा या सा सैव प्रस्तुताश्रया।

अर्थात् प्रस्तुत विषय की अपेक्षा जहाँ अप्रस्तुत विषय का अधिक चर्चा होती है। इस पद्य में अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार भी है।

वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हसि ॥७ ॥

- **अन्वय-** वज्रादपि कठोराणि (तथा) कुसुमादपि मृदुनि लोकोत्तराणां चेतांसि कः नु विज्ञातुमर्हति।

- **शब्दार्थ-**

वज्रादपि- वज्र से भी, कठोराणि- कठोर, कुसुमादपि- पुष्प से भी, मृदुनि- कोमल, लोकोत्तराणाम्- अलौकिक महापुरूषों के, चेतांसि हृदय को, विज्ञातुम्- जानने के लिए, कः- कौन, अर्हति- समर्थ है।

- **अर्थ-**

असाधारणजन (अर्थात् महापुरूषों) के वज्र से भी कठोर और पुष्प से भी कोमल हृदयों को भला कौन जान सकता है ?

- **समास-**

लोकोत्तराणाम्- लोकेभ्यः उत्तराः श्रेष्ठाः तेषाम् इति लोकोत्तराणाम् (शेषे षष्ठी)

- **अलङ्कार-**

अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार का लक्षण है- **अप्रस्तुतप्रशंसा या सा सैव प्रस्तुताश्रया।** अर्थात् जहाँ प्रस्तुत विषय की अपेक्षा अप्रस्तुत विषय की अधिक चर्चा होती है। इस पद्य में अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार है। इस पद्य में प्रस्तुत राम का अलौकिक लोकोत्तर सामान्य से प्रतीति के कारण अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार है।

❑ छन्द-

इस पद्य में अनुष्टुप् छन्द है। इसका लक्षण-

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

इस छन्द का प्रत्येक पाद का छठा वर्ण गुरु और पंचम वर्ण लघु होता है। सप्तम वर्ण प्रथम और तृतीय पाद में गुरु तथा दूसरे और चौथे पाद में लघु होता है। शेष वर्ण का कुछ विशिष्ट नियम नहीं है। पादान्त में यति होती है।

❑ विशेषांश-

महापुरुषों के चरित्र ज्ञान के अगोचरता (कठोर वज्र रूप और पुष्पसदृश कोमलता) का प्रतिपादन किया है।

न किञ्चिदपि कुर्वाणः सौख्यैर्धदुख्यान्यपोहति।
तत्तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः ॥१९॥

- अन्वय- यः यस्य प्रियः जनः, तत् तस्य किमपि द्रव्यम् (सः) किञ्चिदपि न कुर्वाणः सौख्यैः हि दुःखान्यपोहति।
- शब्दार्थ-

यो- जो, यस्य- जिसका, प्रियः- प्यारा, जनः- मनुष्य, किञ्चित्- कुछ भी, न कुर्वाणः- न करता हुआ, अपि- भी, सौख्यैः- सुखों द्वारा, दुःखानि- दुःखों को, अपोहति- दूर करता है, हि- क्योंकि, तत्- वह, तस्य- उसका, किमपि- विलक्षण, द्रव्यम्- वस्तु।

❑ अर्थ-

जो जिसका प्रियपात्र होता है, वह (प्रीतिभाव) उसका अनिर्वचनीय द्रव्य है। वह कुछ भी न करता हुआ सुखों से (उसके) दुःखो को दूर करता है।

❑ समास-

न किञ्चिदपि अकिञ्चिदपि (नञ् तत्पुरूष)

❑ छन्द- अनुष्टुप

❑ अलङ्कार-

अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार- अप्रस्तुत प्रियसामान्य से रामरूप प्रियविशेषरूप प्रस्तुत होने से अप्रस्तुतप्रशंसाङ्कार है।

सामान्य से सीता विशेष का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यस अलङ्कार है।

❑ विशेषांशः-

यहाँ मनुष्य के अनिर्वचनीय द्रव्य की प्राप्ति का अलौकिक आनन्दरूप में उपभोग विषय का प्रतिपादन किया गया है।

धन्यवाद